रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्वायत्तता अछूती है

सरकार के विमुद्रीकरण के निर्णय से विश्लेषकों और कहीं न कहीं आम जनता के मन में भी रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्वायत्तता और उसकी संस्थागत अखंडता पर प्रश्नचिन्ह लग गए हैं। विमुद्रीकरण के फैसले को सैद्धांतिक रूप से गलत समझने वालों का यह भी मानना है कि आर बी आई ने सरकारी तानाशाही के सामने घुटने टेककर अपनी स्वतंत्रता को खो दिया है। ऐसा दृष्टिकोण रखने वाले लोग आर बी आई की स्वायत्तता की प्रकृति को शायद नजरदांज कर रहे हैं।

दरअसल रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया कोई स्वशासी संस्था है ही नहीं। अगर हम आरबीआई अधिनियम की धारा 7 पर एक सरसरी नज़र डालें तो, स्थिति स्पष्ट हो जाती है। धारा 7 के भाग (1) में स्पष्ट लिखा हुआ है कि 'अगर केंद्र सरकार चाहे तो जनहित के लिए आरबीआई के गवर्नर की सलाह से बैंक को आवश्यक दिशानिर्देश दे सकती है।'विमुद्रीकरण के मामले में भी सरकार ने बिल्कुल वैसा ही किया, जैसा कि आरबीआई अधिनियम में उल्लिखित है। विमुद्रीकरण जैसा महत्वपूर्ण निर्णय आरबीआई अकेले नहीं ले सकती, और न ही वह इसे एकतरफा गिरा सकती है।

- ✓ **बैंक की स्वायत्तता और संस्थागत अखंडता**

आरबीआई जैसे केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता और संस्थागत अखंडता को परिभाषित करना वाकई कठिन है। लेकिन दूसरे तरीके से इसे समझा जरूर जा सकता है।

- अन्य सेंट्रल बैंकों की तरह ही आरबीआई में टैक्नोक्रैट और नौकरशाहों की नियुक्ति की जाती है। वे जनता द्वारा न तो चुने जाते हैं और न ही प्रत्यक्ष रूप से उनके प्रति उत्तरदायी होते हैं। जबकि प्रजातंत्र में किसी भी नीति या निर्णय का उत्तरदायित्व जन प्रतिनिधियों पर ही होता है।
- दरअसल, विदेशों में आरबीआई जैसे सेंट्रल बैंकों की स्वतंत्रता को तब तवज्जो दी गई, जब यह देखने में आया कि चुनाव जीतने की दौड़ में लगे राजनीतिक दल विकास को दरकिनार कर मूल्य-स्थिरता तक पर भी ध्यान देना बंद कर देते थे। इससे

अर्थव्यवस्था को बहुत नुकसान पहुंचता था। इसलिए सैंट्रल बैंकों को यह स्वतंत्रता दी गई कि वे अपनी स्वायत्तता के जरिए मुद्रस्फीति की दर को कम और स्थिर रखकर आर्थिक स्थिरता बनाए रख सकें। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि मुद्रा स्फीति की दर तय करना चुनी हुई सरकार का ही काम रहा है। लेकिन इस लक्ष्य पर टिके रहने का काम सेंट्रल बैंक को दिया गया। इसके लिए उसे संपूर्ण स्वायत्तता प्रदान की गई।

- विदेशों के चलन से उलट भारत में पिछले वर्ष तक गवर्नर ही एकमात्र ऐसा व्यक्ति था, जो मुद्रा-स्फीति की दर का निर्धारण करता था। उसे ही आर्थिक नीतियों के बारे में निर्णय लेने और लक्ष्य निर्धारित करने का संपूर्ण अधिकार था। जबकि आर्थिक नीतियों को निर्धारित करने का अधिकार सरकार को होना चाहिए। तत्पश्चात् इन नीतियों को आर्थिक नीति समिति के विशेषज्ञों के समक्ष चर्चा के लिए रखा जाना चाहिए।

अभी भी आरबीआई को ऋण की दर तय करने का अधिकार है। इस कारण समय-समय पर वित्त मंत्रालय और आरबीआई में ठन जाती है। फिर भी ऐसे मौके शायद ही आए हो, जब मंत्रालय आरबीआई के अधिकारों का अतिक्रमण करने में सफल रहा हो।

- ***आरबीआई मुख्य रूप से तीन काम करती है*** -
  - यह ऋण प्रबंधक की तरह काम करती है।
  - दूसरे, यह ब्याज की दरों का निर्धारण करती है।
  - तीसरे, बैंकिग प्रणाली का नियमन करती है।

आरबीआई के पहले प्रभार यानी ऋण प्रबंधन का कार्य सरकार किसी अन्य संस्था को सौंपना चाहती है। लेकिन आरबीआई इसके लिए तैयार नहीं है। चूंकि आरबीआई का दूसरा काम ब्याज की दरें तय करना है, अतः सरकार चाहती है कि सरकार के ऋण प्रबंधन और ब्याज की दरें तय करने के बीच जो टकराव उत्पन्न होता है, उससे बचा जा सकेगा। आरबीआई का मुख्य काम तो मौद्रिक नीति की समीक्षा और संचालन है। अगर ऋण-प्रबंधन के भार से उसे मुक्त कर दिया जाए, तो शायद वह अपने मुख्य काम को अधिक सक्षमता से कर पाएगी।

जहाँ तक आरबीआई के तीसरे काम का सवाल है, तो वह बैंकों की मालिक नहीं है, वरन् नियामक है। दरअसल, सभी सार्वजनिक बैंक सरकार के अधीन हैं, और वही ऋण के लगभग 70% मामलों को नियंत्रित करती है। इस मामले में बैंक और सरकार दोनों ही आश्चर्यजनक रूप से एक-दूसरे के कामों में दखल दिए बिना काम कर रहे हैं।वस्तुतः आरबीआई के किसी भी या उसकी स्वायत्तता पर कोई आंच नहीं आई है। आर्थिक पक्ष से जुड़े निर्णय सरकार के अपने हैं, जिनमें जनता का हित है, जो और प्रजातंत्र की आत्मा है। इस पर ऊँगली नहीं उठाई जा सकती।

'द हिंदू' में प्रकाशित धीरज नय्यर के लेख पर आधारित।